गायत्री मंत्र
एक महाविज्ञान

बुद्धि की देवी गायत्री के प्रत्येक उपासक के लिए स्वाध्याय भी उतना ही आवश्यक धर्म कृत्य है, जितना जप, ध्यान, पाठ आदि। बिना स्वाध्याय के, बिना ज्ञान की उपासना के बुद्धि पवित्र नहीं हो सकती। मानसिक मलीनता दूर नहीं हो सकती और इस सफाई के बिना माता का सच्चा प्रकाश कोई उपासक अपने अंतःकरण में अनुभव नहीं कर सकता। जिसे स्वाध्याय से प्रेम नहीं, उसे गायत्री उपासना से प्रेम है, यह नहीं माना जा सकता। बुद्धि की देवी गायत्री का सच्चा भोजन स्वाध्याय ही है। ज्ञान के बिना मुक्ति संभव नहीं। इसलिए गायत्री उपासना के साथ ज्ञान की उपासना भी अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है।

—पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

□ प्रकाशक :
युग निर्माण योजना
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-३
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

□ लेखक : पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

□ सन् : २००७ *मूल्य : ४.०० रुपये*
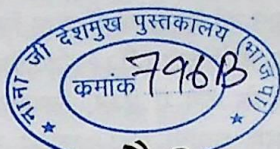
गायत्री शक्ति क्या है?

प्राणों को तारने वाली क्षमता के कारण आदिशक्ति गायत्री कहलाई। ऐतरेय ब्राह्मण ग्रंथ में इस अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है—'**गयान् प्राणान् त्रायते सा गायत्री।**' अर्थात जो गय (प्राण) की रक्षा करती है वह गायत्री है। शंकराचार्य भाष्य में गायत्री शक्ति को स्पष्ट करते हुए कहा गया है—'**गीयते तत्त्व मनया गायत्रीति**' अर्थात जिस विवेक-बुद्धि-ऋतंभरा प्रज्ञा से वास्तविकता का ज्ञान होता है, वह गायत्री है।

गायत्री उस बुद्धि का नाम है, जो अच्छे गुण एवं कल्याणकारी तत्त्वों से भरी होती है। उसकी प्रेरणा से मनुष्य का शरीर और मस्तिष्क ऐसे रास्ते पर चलता है, कि कदम-कदम पर कल्याण के दर्शन होते हैं। हर कदम पर आनंद का संचार होता है। हर क्रिया उसे अधिक पुष्ट, सशक्त और मजबूत बनाती है तथा वह दिनोदिन अधिकाधिक गुण व शक्तिवान बनता जाता है; जबकि दुर्बुद्धि से उपजे विचार और काम हमारी प्राणशक्ति को दिन-प्रतिदिन कम करते जाते हैं। दुर्बुद्धि से इस अमूल्य जीवन को यों ही गँवा रहे व्यक्तियों के लिए गायत्री एक प्रकाश है, एक सच्चा सहारा है, एक आशापूर्ण संदेश है, जो उनकी सद्बुद्धि को जगाकर इस दलदल से उबारता है, उनके प्राणों की रक्षा करता है व जीवन में सुख-शांति एवं आनंद का द्वार खोल देता है।

इस तरह गायत्री कोई देवी, देवता या कल्पितशक्ति नहीं है, बल्कि परमात्मा की इच्छाशक्ति है, जो मनुष्य में सद्बुद्धि के रूप में प्रकट होकर उसके जीवन को सार्थक एवं सफल बनाती है।

जीवन व सृष्टि के रहस्यों की खोज में साधनारत ऋषियों ने ध्यान की गहराइयों में पाया कि इनके मूल में सक्रिय शक्तियाँ शब्द रूप में विद्यमान हैं। आदिशक्ति का साक्षात्कार चौबीस अक्षरों वाले मंत्र के रूप में हुआ, जिसका नाम इसकी प्राण-रक्षक क्षमता के कारण गायत्री पड़ा। इसकी खोज का श्रेय ऋषि विश्वामित्र को जाता है।

वेदमाता गायत्री की उत्पत्ति

वेद कहते हैं ज्ञान को। ज्ञान के चार भेद हैं—ऋक्, यजु, साम और अथर्व। कल्याण, प्रभु-प्राप्ति, ईश्वरीय दर्शन, दिव्यत्व, आत्मशक्ति, ब्रह्म-निर्वाण, धर्म-भावना, कर्त्तव्य-पालन, प्रेम, तप, दया, उपकार, उदारता, सेवा आदि ऋक् के अंतर्गत आते हैं। पराक्रम, पुरुषार्थ, साहस, वीरता, रक्षा, आक्रमण, नेतृत्व, यश, विजय, पद, प्रतिष्ठा यह सब 'यजु' के अंतर्गत आते हैं। क्रीड़ा, विनोद, मनोरंजन, संगीत, कला, साहित्य, प्रिय कल्पना, खेल, गतिशीलता, रुचि, तृप्ति आदि को 'साम' के अंतर्गत लिया जाता है। धन, वैभव, वस्तुओं का संग्रह, शास्त्र, औषधि, अन्न, वस्तु, धातु, ग्रह, वाहन आदि सुख-साधनों की सामग्रियाँ, 'अथर्व' की परिधि में आती हैं।'

किसी भी जीवित प्राणधारी को लीजिए, उसकी सूक्ष्म और स्थूल, बाहरी एवं भीतरी क्रियाओं और कल्पनाओं का गंभीर तथा वैज्ञानिक विश्लेषण कीजिए, प्रतीत होगा कि इन्हीं चार क्षेत्रों के अंतर्गत उसकी समस्त चेतना परिभ्रमण कर रही है। (१) ऋक्-कल्याण (२) यजु-पौरुष (३) साम-क्रीड़ा (४) अथर्व-अर्थ। इन चार दिशाओं के अतिरिक्त प्राणियों की ज्ञान-धारा और किसी ओर प्रवाहित नहीं होती। ऋक् को धर्म, यजु को मोक्ष, साम को काम, अथर्व को अर्थ भी कहा जाता है। वेद शब्द का अर्थ है—'ज्ञान' इस प्रकार वह एक है, परंतु एक होते हुए भी वह प्राणियों के अंतःकरण में चार प्रकार का दिखाई देता है। इसलिए एक वेद को सुविधा के लिए चार भागों में विभक्त कर दिया गया है।

यह चारों प्रकार के ज्ञान उस चैतन्यशक्ति के ही स्फुरण हैं, जो सृष्टि के आरंभ में ब्रह्मा जी ने उत्पन्न की थी और जिसे शास्त्रकारों ने गायत्री नाम से संबोधित किया है। इस प्रकार वेदों की माता गायत्री हुई। इसी से उसे 'वेदमाता' भी कहा जाता है।

ब्रह्मा ने चार वेदों की रचना से पूर्व चौबीस अक्षर वाले गायत्री मंत्र की रचना की। इस एक मंत्र के एक-एक अक्षर में सूक्ष्मतत्त्व समाहित हैं, जिनके पल्लवित होने पर चार वेदों की शाखा-प्रशाखाएँ उद्‌भूत हो गईं। गायत्री मंत्र के चौबीस अक्षरों से इसी प्रकार वैदिक साहित्य के अंग-प्रत्यंगों का प्रादुर्भाव हुआ है। गायत्री सूत्र है तो वैदिक ऋचाएँ उसकी विस्तृत व्याख्या हैं।

गायत्री का स्वरूप

गायत्री परमात्मा की वह इच्छाशक्ति है, जिसके कारण सारी सृष्टि चल रही है। छोटे से परमाणु से लेकर पूरे विश्व-ब्रह्मांड तक सभी उसी की शक्ति के प्रभाव से गतिशील हैं।

स्वयं परमात्मा तो मूलरूप में निराकार हैं, सब कुछ तटस्थ भाव से देखते हुए शांत अवस्था में रहते हैं। सृष्टि के आरंभ में जब उनकी इच्छा एक से अनेक होने की हुई, तो उनकी यह चाहना व इच्छा एक शक्ति बन गई। इसी के सहारे यह सारी सृष्टि बनकर खड़ी हो गई। सृष्टि को बनाने वाली प्रारंभिक शक्ति होने के कारण इसे 'आदि शक्ति' कहा गया। पूरी विश्व-व्यवस्था के पीछे और अंदर जो संतुलन और सुव्यवस्था दिखाई दे रही है, वह गायत्री शक्ति का ही काम है। इसी की प्रेरणा से विश्व-ब्रह्मांड की सारी हलचलें किसी विशेष उद्‌देश्य के साथ अपनी महायात्रा पर आगे बढ़ रही हैं।

ब्रह्मा जी को सृष्टि के निर्माण और विस्तार के लिए जिस ज्ञान और क्रिया-कौशल की जरूरत पड़ी थी, वह उन्हें आदिशक्ति गायत्री की तप-साधना द्वारा ही प्राप्त हुआ था। यही ज्ञान-विज्ञान वेद कहलाया और इस रूप में आदिशक्ति का नाम वेदमाता पड़ा अर्थात वेदों का सार गायत्री मंत्र में बीजरूप में भरा पड़ा है।

सृष्टि की व्यवस्था को सँभालने व चलाने वाली विभिन्न देवशक्तियाँ आदिशक्ति की ही धाराएँ हैं। इस रूप में इसे देवमाता नाम से जाना जाता है। देवमाता का अनुग्रह पाने वाला सामान्य व्यक्ति भी देवतुल्य गुण व शक्ति वाला बन जाता है।

सारे विश्व की उत्पत्ति आदिशक्ति के गर्भ से हुई। अतः इसे विश्वमाता नाम से भी जाना जाता है और इस रूप में माँ का कृपापात्र व्यक्ति, विश्वमानव बनकर 'वसुधैव कुटुंबकम्' अर्थात पूरा विश्व अपने परिवार के उदारभाव में जीने लगता है।

गायत्री मंत्र के उच्चारण से शक्तियों का उद्भव

गायत्री मंत्र में २४ अक्षर हैं। इनका संबंध शरीर में स्थित ऐसी २४ ग्रंथियों से है, जो जाग्रत होने पर सद्बुद्धि प्रकाशक शक्तियों को सतेज करती हैं। गायत्री मंत्र के उच्चारण से सूक्ष्मशरीर का सितार २४ स्थानों से झंकार देता है और उससे ऐसी स्वर-लहरी उत्पन्न होती है, जिसका प्रभाव अदृश्य जगत के महत्त्वपूर्ण तत्त्वों पर पड़ता है। यह प्रभाव ही गायत्री-साधना के फलों का प्रभाव हेतु है।

शब्दों का ध्वनि-प्रवाह तुच्छ चीज नहीं है। शब्द-विद्या के आचार्य जानते हैं कि शब्द में कितनी शक्ति है और उसकी अज्ञात गतिविधि के द्वारा क्या-क्या परिणाम उत्पन्न हो सकते हैं ? शब्द को ब्रह्म कहा गया है। ब्रह्म की स्फुरणा कंपन उत्पन्न करती है। शब्दों के कंपन सूक्ष्म प्रकृति से अपनी जाति के अन्य परमाणुओं को लेकर ईथर का परिभ्रमण करते हुए, जब अपने उद्गम केंद्र पर कुछ ही क्षणों में लौट आते हैं, तो उसमें अपने प्रकार की एक विशेष विद्युतशक्ति भरी होती है और परिस्थिति के अनुसार उपयुक्त क्षेत्र पर उस शक्ति का एक विशिष्ट प्रभाव पड़ता है। मंत्रों द्वारा विलक्षण कार्य होने का भी यही कारण है। गायत्री मंत्र द्वारा भी इसी प्रकार शक्ति का आविर्भाव होता है। मंत्रोच्चारण में मुख के जो अंग क्रियाशील होते हैं, उन भागों में नाड़ी तंतु कुछ विशेष ग्रंथियों को गुदगुदाते हैं। उनमें स्फुरणा होने से एक वैदिक छंद का क्रमबद्ध

यौगिक संगीत-प्रवाह ईथर तत्त्व में फैलता है और अपनी कुछ क्षणों में होने वाली विश्व परिक्रमा से वापस आते-आते एक स्वजातीय तत्त्वों की सेना साथ ले आता है, जो अभीष्ट उद्‌देश्य की पूर्ति में बड़ी सहायक होती है।

गायत्री साधना का उद्‌देश्य

आत्मकल्याण और आत्मोत्थान के लिए अनेक प्रकार की साधनाओं का आश्रय लिया जाता हैं। देश, काल और पात्र के भेद के कारण ही साधना मार्ग का निर्णय करने में बहुत-कुछ विचार और परिवर्तन करना पड़ता है। 'स्वाध्याय' में रुचि होने से सन्मार्ग की ओर रुचि होती है। सत्संग से स्वभाव और संस्कार शुद्ध बनते हैं। कीर्तन से एकाग्रता और तन्मयता की वृद्धि होती है। 'दान-पुण्य' से त्याग और अपरिग्रह की भावना पुष्ट होती है। 'पूजा-उपासना' से आस्तिक भावना और ईश्वर विश्वास की भावना उत्पन्न होती है। इस प्रकार भिन्न उद्‌देश्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगोचर रखकर ऋषियों ने अनेक प्रकार की साधनाओं का उपदेश दिया है, पर इनमें सर्वोपरि 'तप' की साधना ही है।

तप की अग्नि से आत्मा के मल-विक्षेप और पाप-ताप बहुत शीघ्र भस्म हो जाते हैं तथा आत्मा में एक अपूर्व शक्ति का आविर्भाव होता है। गायत्री उपासना सर्वश्रेष्ठ तपश्चर्या है। उच्च मनःक्षेत्र (सुपरमेंटल) ही ईश्वरीय दिव्यशक्तियों के अवतरण का उपयुक्त स्थान है। हवाई जहाज वहीं उतरता है, जहाँ अड्‌डा होता है। ईश्वरीय दिव्यशक्ति मानव प्राणी के इसी उच्च मनःक्षेत्र में उतरती है। यदि वह साधना द्वारा निर्मल नहीं बना लिया गया है तो अति सूक्ष्म दिव्यशक्तियों को अपने में नहीं उतारा जा सकता। गायत्री-साधना साधक के उच्च मनःक्षेत्र को उपयुक्त हवाई अड्‌डा बनाती है, जहाँ वह दैवी शक्ति उतर सके। इसके फलस्वरूप साधक को जो दैवी शक्ति प्राप्त होती है उससे सच्चा आत्मिक आनंद प्राप्त करके उच्च से उच्च भौतिक और आध्यात्मिक लक्ष्य को वह प्राप्त कर सकता है।

गायत्री ही कामधेनु है

पुराणों में उल्लेख है कि सुरलोक में देवताओं के पास कामधेनु गौ है, वह अमृतोपम दूध देती है। जिसे पीकर देवता लोग सदा संतुष्ट, प्रसन्न तथा सुसंपन्न रहते हैं। इस गौ में यह विशेषता है कि उसके समीप कोई अपनी कुछ कामना लेकर आता है तो उसकी इच्छा तुरंत पूरी हो ही जाती है। यह कामधेनु गौ, गायत्री ही है। इस महाशक्ति की जो देवता, दिव्य स्वभाव वाला मनुष्य उपासना करता है, वह माता के स्तनों के समान आध्यात्मिक दुग्ध धारा का पान करता है, उसे किसी प्रकार कोई कष्ट नहीं रहता। आत्मा स्वतः आनंद स्वरूप है। आनंदमग्न रहना उसका प्रमुख गुण है। दुःखों के हटते और मिटते ही वह अपने मूल स्वरूप में पहुँच जाता है। देवता स्वर्ग में सदा आनंदित रहते हैं। मनुष्य भी भूलोक में उसी प्रकार आनंदित रह सकता है, यदि उसके कष्टों का निवारण हो जाए। गायत्री कामधेनु मनुष्य के सभी कष्टों का समाधान कर देती है।

मंत्रदीक्षा का महत्त्व

गायत्री मंत्रदीक्षा के साथ गुरुवरण का क्रम अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। गायत्री को गुरुमंत्र भी कहा गया है। प्राचीनकाल में बालक गुरुकुल में विद्या पढ़ने जाते थे तो उन्हें वेदारंभ संस्कार के समय गुरुमंत्र के रूप में गायत्री मंत्र की ही दीक्षा दी जाती थी। गुरु के माध्यम से ही व्यक्ति अपनी श्रद्धा और विश्वास को विकसित करता है। गायत्री-साधना की सफलता में इन्हीं बातों का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है, इनके बिना गायत्री-साधना में आशाजनक सफलता की उम्मीद नहीं की जा सकती। बिना श्रद्धा के बाहरी कर्मकांड प्रतीक-पूजा भर रह जाते हैं। गुरु और शिष्य के बीच जो श्रद्धा के सूत्र का मजबूत संबंध रहता है, वही लक्ष्य तक पहुँचाने और साधना को सफल बनाने में समर्थ सिद्ध होता है। जैसे शुरू में छोटे तीर-कमान का अभ्यास करने वाला योद्धा बड़ा होने पर प्रचंड

धनुष-बाणों का प्रयोग करने में समर्थ हो जाता है, उसी प्रकार गुरु पर जमाया हुआ श्रद्धा-विश्वास बढ़ते-बढ़ते ईश्वरभक्ति और प्रेम का रूप ले लेता है। गुरुदीक्षा के साथ शुरू की गई गायत्री-साधना विशेष रूप से फलवती होती है।

गायत्री-साधना से अनेक प्रयोजनों की सिद्धि

गायत्री मंत्र सर्वोपरि मंत्र है। इससे बड़ा और कोई मंत्र नहीं। जो काम संसार के किसी अन्य मंत्र से नहीं हो सकता, वह निश्चित रूप से गायत्री मंत्र द्वारा हो सकता है। दक्षिणमार्गी योगसाधक वेदोक्त पद्धति से जिन कार्यों के लिए अन्य किसी मंत्र से सफलता प्राप्त करते हैं, वे सब प्रयोजन गायत्री से पूरे हो सकते हैं। यह एक प्रचंड शक्ति है, जिसे जिधर भी लगा दिया जाएगा, उधर ही चमत्कारी सफलता मिलेगी।

काम्य कर्मों के लिए, सकाम प्रयोजनों जैसे कि रोग निवारण, विष निवारण, बुद्धि वृद्धि, राजकीय सफलता, दरिद्रता का नाश, सुसंतति की प्राप्ति, शत्रुता का संहार, भूत-बाधा की शांति, दूसरों को प्रभावित करना, रक्षा कवच, बुरे मुहूर्त और शकुनों का परिहार, बुरे स्वप्नों के फल का नाश आदि के लिए अनुष्ठान करना आवश्यक होता है। सवालक्ष का पूर्ण अनुष्ठान, चौबीस हजार का लघु अनुष्ठान अपनी-अपनी मर्यादा के अनुसार फल देते हैं। "जितना गुड़ डालो उतना मीठा" वाली कहावत इस क्षेत्र में भी चरितार्थ होती है। साधना और तपश्चर्या द्वारा जो आत्मबल संग्रह किया गया है, उसे जिस काम में भी खरच किया जाएगा, उसका प्रतिफल अवश्य मिलेगा। गायत्री की साधना चाहे निष्काम भाव से की जाए, चाहे सकाम भाव से, पर उसका फल अवश्य मिलता है।

अभीष्ट फल न भी मिले तो भी गायत्री साधना का श्रम खाली नहीं जाता, उससे दूसरे प्रकार के लाभ तो प्राप्त हो ही जाते हैं। उसे अन्य अनेक मार्गों से ऐसे लाभ मिलेंगे, जिनकी आशा बिना साधना के नहीं की जा सकती थी।

सफलता के लक्षण

गायत्री साधना से साधक में एक सूक्ष्म दैवी चेतना का आविर्भाव होता है। प्रत्यक्ष रूप से उसके शरीर या आकृति में कोई विशेष अंतर नहीं आता, पर भीतर ही भीतर भारी हेर-फेर हो जाता है। आध्यात्मिक तत्त्वों की वृद्धि से प्राणमय कोश, विज्ञानमय कोश, और मनोमय कोश में, जो परिवर्तन होता है, उसकी छाया अन्नमय कोश में बिल्कुल दृष्टिगोचर न हो ऐसा नहीं हो सकता। यह सच है कि शरीर का ढाँचा आसानी से नहीं बदलता, पर यह भी सच है कि आंतरिक हेर-फेर के चिह्न शरीर में प्रकट हुए बिना नहीं रह सकते।

इसकी परीक्षा इन लक्षणों से हो सकती है, जो नीचे दिए गए हैं।

(१) शरीर में हलकापन और मन में उत्साह होता है।

(२) शरीर में से एक विशेष प्रकार की सुगंध आने लगती है।

(३) त्वचा पर चिकनाई और कोमलता का अंश बढ़ जाता है।

(४) तामसिक आहार-विहार से घृणा बढ़ जाती है और सात्विक दिशा में मन लगने लगता है।

(५) स्वार्थ का कम और परमार्थ का अधिक ध्यान रहता है।

(६) नेत्रों में तेज झलकने लगता है।

(७) किसी व्यक्ति या कार्य के विषय में वह जरा भी विचार करता है, तो उसके संबंध में बहुत-सी ऐसी बातें स्वयमेव प्रतिभासित होती हैं, जो परीक्षा करने पर ठीक निकलती हैं।

(८) दूसरों के मन के भाव जान लेने में देर नहीं लगती।

(९) भविष्य में घटित होने वाली बातों का पूर्वाभास मिलने लगता है।

(१०) शाप या आशीर्वाद सफल होने लगते हैं। अपनी गुप्त शक्तियों से वह दूसरों का बहुत कुछ लाभ या हानि कर सकता है।

गायत्री-साधना से श्री, समृद्धि और सफलता

गायत्री त्रिगुणात्मक है। उसकी उपासना से जहाँ सतोगुण बढ़ता है, वहाँ कल्याणकारक एवं उपयोगी रजोगुण की भी अभिवृद्धि होती है। रजोगुणी आत्मबल बढ़ने से मनुष्य की गुप्त शक्तियाँ जाग्रत होती हैं, जो सांसारिक जीवन के संघर्ष में अनुकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न करती हैं। उत्साह, साहस, स्फूर्ति, निरालस्यता, आशा, दूरदर्शिता, तीव्र बुद्धि, अवसर की पहचान, वाणी में माधुर्य, व्यक्तित्व में आकर्षण, स्वभाव में मिलनसारी जैसी अनेक छोटी-बड़ी विशेषताएँ उन्नत तथा विकसित होती हैं, उपासक भीतर ही भीतर एक नए ढाँचे में ढलता रहता है, उसमें ऐसे परिवर्तन हो जाते हैं, जिनके कारण साधारण व्यक्ति भी धनी, समृद्ध हो सकता है।

गायत्री उपासकों में ऐसी त्रुटियाँ जो मनुष्य को दुखी बनाती हैं, नष्ट होकर, वे विशेषताएँ उत्पन्न होती हैं, जिनके कारण मनुष्य क्रमश: समृद्धि, संपन्नता और उन्नति की ओर अग्रसर होता है। गायत्री अपने साधकों को संपन्न बनाती है, जिनके कारण वह अभावग्रस्त और दीन-हीन नहीं रह सकता।

यह दिव्य प्रसाद औरों को भी बाँटिए

पुण्यकर्मों के साथ प्रसाद बाँटना एक आवश्यक धर्मकृत्य माना गया है। गायत्री का प्रसाद तो ऐसा होना चाहिए, जिसे ग्रहण करने वाले को स्वर्गीय स्वाद मिले, जिसे खाकर उसकी आत्मा तृप्त हो जाए। गायत्री ब्राह्मी शक्ति है, उसका प्रसाद भी ब्राह्मी प्रसाद होना चाहिए, तभी वह उपयुक्त गौरव का कार्य होगा। इस प्रकार का प्रसाद हो सकता है—ब्रह्म दान, ब्राह्मी स्थिति की ओर चलाने का आकर्षण, प्रोत्साहन। जिस व्यक्ति को ब्रह्म प्रसाद लेना है, उसे आत्मकल्याण की दिशा में आकर्षित करना और उस ओर चलने के लिए उसे प्रोत्साहित करना ही प्रसाद है।

जो व्यक्ति गायत्री की साधना करे, उसे प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि मैं भगवती को प्रसन्न करने के लिए उसका महाप्रसाद, ब्रह्म

प्रसाद अवश्य वितरण करूँगा। यह वितरण इस प्रकार का होना चाहिए, जिसमें पहले के कुछ शुभ संस्कारों के बीज मौजूद हों, उन्हें धीरे-धीरे गायत्री का माहात्म्य, रहस्य, लाभ समझाते रहा जाए। इस प्रकार उनकी रुचि को इस दिशा में मोड़ा जाए, जिससे वे आरंभ में भले ही सकाम भावना से ही सही, वेदमाता का आश्रय ग्रहण करें, पीछे तो स्वयं ही इस महालाभ पर मुग्ध होकर छोड़ने का नाम न लेंगे। एक बार रास्ते पर डाल देने से गाड़ी अपने आप ही ठीक मार्ग पर चलती जाती है। यह ब्रह्म प्रसाद अन्य साधारण स्थूल पदार्थों की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।

महापुरुषों द्वारा गायत्री महिमा का गान

अपनी अद्वितीय विशेषताओं के कारण ही गायत्री महाशक्ति को भारतीय संस्कृति की जननी होने का गौरव प्राप्त है। हर युग में ऋषि-मुनियों, महापुरुषों एवं विद्वानों ने इसकी महिमा का गुणगान किया है। अन्य विषयों पर उनके मतभेद हो सकते हैं; किंतु गायत्री के विषय में वैदिक युग से आधुनिक समय तक सभी ने एकमत से गायत्री की महिमा को स्वीकारा है।

अथर्ववेद में गायत्री की स्तुति में इसे साधक को आयु, प्राण, शक्ति, कीर्ति, धन और ब्रह्मतेज देने वाला बताया गया है। विश्वामित्र के अनुसार—गायत्री से बढ़कर पवित्र करने वाला और कोई मंत्र नहीं है। योगिराज याज्ञवल्क्य के अनुसार—"यदि एक तराजू में एक ओर समस्त वेदों को और दूसरी ओर गायत्री को तोला जाए तो गायत्री का पलड़ा भारी रहेगा।" महर्षि वेदव्यास कहते हैं कि जैसे फूलों का सार शहद, दूध का सार घी है, उसी प्रकार वेदों का सार गायत्री है। सिद्ध की हुई गायत्री कामधेनु के समान है। गीता में भगवान कृष्ण ने स्वयं कहा है—"**गायत्री छन्दसामहम्**" अर्थात गायत्री मैं ही हूँ। भगवान की उपासना के लिए गायत्री से बड़ा और कोई मंत्र नहीं हो सकता।

इसी तरह के विचार प्रायः सभी ऋषियों के मिलते हैं। बुद्धि, तर्क और प्रत्यक्षवाद के इस युग के दार्शनिकों व आध्यात्मिक

महापुरुषों ने भी गायत्री के महत्त्व को उसी प्रकार स्वीकारा है जैसा कि प्राचीन काल के ऋषि-मुनि लोग मानते थे। रवींद्रनाथ टैगोर के अनुसार भारतवर्ष को जगाने वाला मंत्र इतना सरल है कि उसका एक श्वास में ही उच्चारण किया जा सकता है और वह है—गायत्री मंत्र। स्वामी विवेकानंद इसे सद्बुद्धि का मंत्र होने के नाते मंत्रों का मुकुटमणि मानते थे। महात्मा गांधी इसे रोग रक्षक, शांतिदायक व आत्मा के लिए प्रगतिकारक प्रभाव मानते थे। योगी अरविंद इसको आत्मा के विभिन्न स्तरों को प्रकाशित करने वाली प्रचंड शक्ति मानते थे। जगद्गुरु शंकराचार्य के अनुसार गायत्री आदि मंत्र है, इसकी महिमा का गान मनुष्य की सामर्थ्य के बाहर है। जीवन लक्ष्य को पाने की समझ जिस बुद्धि से प्राप्त होती है, उसकी प्रेरणा गायत्री द्वारा होती है। स्वामी रामतीर्थ के वचन—"राम को पाना सबसे बड़ा काम है और गायत्री से शुद्ध हुई बुद्धि ही राम को पा सकती है।" आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद इसे सबसे श्रेष्ठ मंत्र, वेदों का मूल गुरुमंत्र मानते थे।

इन सभी उद्गारों से स्पष्ट होता है कि गायत्री उपासना कोई अंधविश्वास या अंध परंपरा नहीं है, बल्कि उसके पीछे आत्मोन्नति करने वाले ठोस तत्त्व छिपे हैं, जो भौतिक दृष्टि से भी व्यक्ति को संपन्न बनाने में समर्थ हैं।

गायत्री का शाप विमोचन और उत्कीलन का रहस्य

गायत्री मंत्र पर वसिष्ठ और विश्वामित्र ऋषियों के शाप का उल्लेख आता है और कहा जाता है कि जो इस शाप का उत्कीलन कर लेता है, उसी की साधना सफल होती है। इस आलंकारिक वर्णन में गायत्री-साधना को विधिवत रूप से अनुभवी एवं योग्य मार्गदर्शक के संरक्षण में ही करने का रहस्य छिपा है। वसिष्ठ का अर्थ है—विशेष रूप से श्रेष्ठ। प्राचीन काल में जो व्यक्ति सवा करोड़ गायत्री जप करते थे उन्हें वसिष्ठ की पदवी दी जाती थी।

वसिष्ठ शाप मोचन का तात्पर्य यह कि इस प्रकार के किसी अनुभवी उपासक से गायत्री दीक्षा लेनी चाहिए। विश्वामित्र का अर्थ है—सबकी भलाई करने वाला, कर्त्तव्यनिष्ठ एवं सच्चरित्र। गायत्री का शिक्षक केवल वसिष्ठ गुणों वाला ही होना पर्याप्त नहीं। उसे विश्वामित्र भी होना चाहिए। ऐसे ही व्यक्ति से गायत्री की विधिवत शिक्षा-दीक्षा लेने पर ही इस महामंत्र से सही-सही लाभ उठाना संभव होता है। अपने आप मन चाहे तरीकों से कुछ न कुछ करते रहने से अधिक लाभ नहीं प्राप्त हो सकता। जिसने ऐसा पथ-प्रदर्शक पा लिया, उसकी साधना की आधी मंजिल पार हो गई समझ लेना चाहिए। यही शाप मोचन-उत्कीलन का रहस्य है, अन्यथा गायत्री जैसी विश्वजननी महाशक्ति को कोई भी सत्ता शाप देने में समर्थ नहीं है।

गायत्री द्वारा सद्गुणों की वृद्धि

गायत्री साधना से व्यक्ति में जो असाधारण हेर-फेर होता है, उसका सबसे पहला प्रभाव उसके अंत:करण पर पड़ता है। यह उसके विचारों को, मन को और भावों को सही रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित करता है। व्यक्ति में अच्छे गुणों की बढ़ोत्तरी शुरू हो जाती है। इससे उसके दोष-दुर्गुणों में कमी आने लगती है। इस तरह साधक में अनेक गुण व विशेषताएँ पैदा होने लगती हैं, जो जीवन को अधिक सरल, सफल और शांतिमय बनाने में मदद करती हैं।

अच्छे गुणों की वृद्धि के कारण शारीरिक क्रियाओं और गतिविधियों में भारी हेर-फेर हो जाता है। इंद्रियों के व्यसनों में भटकने की गति कम होने लगती है। जीभ का चटोरापन व खान-पान की गलत आदतें धीरे-धीरे सुधरने लगती हैं। इसी प्रकार कामेंद्रिय की उत्तेजना संयमित होने लगती है। कुमार्ग में, व्यभिचार में, वासना में मन कम दौड़ता है। ब्रह्मचर्य के प्रति श्रद्धा बढ़ जाती है, जिससे वीर्य रक्षा का मार्ग साफ हो जाता है। कामेंद्रिय और

स्वादेंद्रिय—ये दो ही प्रधान इंद्रियाँ है। इनके संयमित होते ही स्वास्थ्यं रक्षा और नीरोगता का रास्ता खुल जाता है। अपनी दिनचर्या में स्वच्छता, सुव्यवस्था और श्रम-संतुलन का क्रम जुड़ने लगता है, जिसके कारण प्रगति और सफलता की दिशा स्पष्ट होने लगती है।

. मानसिक क्षेत्र में सद्‌गुणों की वृद्धि के कारण आलस्य, अधीरता, व्यसन, क्रोध, भय, चिंता जैसे दोष-दुर्गुण कम होने लगते हैं। इनकी कमी के साथ संयम, स्फूर्ति, साहस, धैर्य, विनम्रता, संतोष, सद्‌भाव जैसे गुण बढ़ने लगते हैं। इस आंतरिक हेर-फेर का नतीजा यह होता है कि नासमझी से पैदा होने वाले अनेक भ्रम-भटकावों से छुटकारा मिलने लगता है और दैनिक जीवन में नित्य छाए रहने वाले दुःखों का सहज समाधान होता जाता है। संयम, सेवा, नम्रता, उदारता, दान, ईमानदारी जैसे सद्‌गुणों के कारण दूसरों को भी लाभ मिलता है और हानि की आशंका नहीं रहती। अतः प्रायः सभी लोग कृतज्ञ, प्रशंसक, सहायक, रक्षक बन जाते हैं। आपसी सद्‌भावना व कृतज्ञता से आत्मा को तृप्त करने वाले प्रेम एवं संतोष नामक रस दिन-दिन अधिक मात्रा में उपलब्ध होने लगते हैं और जीवन आनंदमय बनता जाता है। इसके अतिरिक्त ये गुण अपने आप में इतने मधुर होते हैं कि जिसके भी हृदय में होंगे, वहाँ आत्मसंतोष का शीतल झरना बह रहा होगा। अर्थात गायत्री साधना मनुष्य के अंदर गहरा परिवर्तन लाकर सुख-शांति का रास्ता खोल देती है।

विश्वमाता की पवित्र उपासना

भगवान को हम जिस भी रूप में मानते हैं, वह उसी रूप में हमें जवाब देते हैं व अनुभूति कराते हैं। हम भगवान से प्रेम करते हैं और उनका अनन्य प्रेम पाना चाहते हैं। माता के रूप में उन्हें भजना सबसे सही और अनुकूल बैठता है। माता का जैसा वात्सल्य अपने बालक पर होता है, वैसा ही प्रेम-प्रतिफल प्राप्त करने के लिए

भगवान से मातृ-संबंध स्थापित करना आत्मविद्या के मनोवैज्ञानिक रहस्यों के आधार पर अधिक उपयोगी और लाभदायक सिद्ध होता है। प्रभु को माता मानकर जगज्जननी वेदमाता के रूप में उसकी उपासना से भगवान की ओर से वैसी ही वात्सल्य भरी प्रतिक्रिया होगी, जैसी कि माता को अपने बच्चे के प्रति होती है। माता की गोदी में बालक अपने को सबसे अधिक आनंदित व सुरक्षित-संतुष्ट अनुभव करता है।

विश्वनारी के रूप में भगवान की मातृभाव से, परम पवित्र भावनाओं के साथ उपासना करना, मातृजाति के प्रति पवित्रता को अधिकाधिक बढ़ाता है। इस दिशा में जितनी सफलता मिलती जाती है, उसी अनुपात में इंद्रिय संयम, मनोनिग्रह और मनोविकारों का शमन अपने आप होता जाता है। मातृशक्ति के हृदय में दुर्भावनाएँ अधिक देर नहीं ठहर सकतीं। विश्वनारी के रूप में भगवान की उपासना नररूप की पूजा से श्रेष्ठ ही सिद्ध होती है।

गायत्री के चौबीस देवता

गायत्री के २४ अक्षर यथार्थ में २४ शक्ति बीज हैं। पृथ्वी, जल, वायु, तेज एवं आकाश ये पाँच तत्त्व तो प्रधान हैं ही, इनके अतिरिक्त २४ तत्त्व हैं, जिनका वर्णन सांख्य दर्शन में किया गया है। सृष्टि ने इन २४ तत्त्वों का गुंफन करके एक सूक्ष्म आध्यात्मिक शक्ति का आविर्भाव किया, जिसका नाम गायत्री रखा गया। गायत्री के २४ अक्षर चौबीस मातृकाओं की महाशक्तियों के प्रतीक हैं। उनका पारस्परिक गुंथन ऐसे वैज्ञानिक क्रम से हुआ है कि इस महामंत्र का उच्चारण करने मात्र से शरीर के विभिन्न भागों में अवस्थित चौबीस बड़ी ही महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ जाग्रत होती हैं।

गायत्री मंत्र के २४ अक्षरों में से प्रत्येक के देवता क्रमशः निम्न प्रकार हैं—

(१) गणेश (२) नृसिंह (३) विष्णु (४) शिव (५) कृष्ण (६) राधा (७) लक्ष्मी (८) अग्नि (९) इंद्र (१०) सरस्वती

(११) दुर्गा (१२) हनुमान (१३) पृथ्वी (१४) सूर्य (१५) राम (१६) सीता (१७) चंद्रमा (१८) यम (१९) ब्रह्मा (२०) वरुण (२१) नारायण (२२) हयग्रीव (२३) हंस (२४) तुलसी।

गायत्री-साधना से आपत्तियों का निवारण

विपरीत परिस्थितियों का प्रवाह बड़ा प्रबल होता है। उसके थपेड़े में जो फँस गया, वह विपत्ति की ओर बढ़ता ही जाता है। बीमारी, धन-हानि, मुकदमा, शत्रुता, बेकारी, गृह-कलह, विवाद, कर्ज आदि की शृंखला जब चल पड़ती है, तो मनुष्य हैरान हो जाता है। कहावत है कि विपत्ति अकेली नहीं आती, वह हमेशा अपने बाल-बच्चे साथ लाती है।

विपत्ति और विपरीत परिस्थितियों की धारा से त्राण पाने के लिए धैर्य, साहस, विवेक और प्रयत्न की आवश्यकता है। इन चार कोनों वाली नाव पर चढ़कर ही संकट की नदी को पार करना सुगम होता है। गायत्री की साधना आपत्ति के समय इन चार तत्त्वों को मनुष्य के अंत:करण में विशेषरूप से प्रोत्साहित करती है। जिससे वह ऐसा ठीक मार्ग ढूँढ़ने में सफल हो जाता है, जो उसे विपत्ति से पार लगा दे।

स्त्रियों को गायत्री का अधिकार

भारतवर्ष में सदा से स्त्रियों का समुचित सम्मान रहा है। उन्हें पुरुषों की अपेक्षा अधिक पवित्र माना जाता रहा है। स्त्रियों को बहुधा 'देवी' संबोधन से संबोधित किया जाता है। देवताओं और महापुरुषों के साथ उनकी शक्तियों के नाम भी जुड़े हुए हैं— सीताराम, राधेश्याम, गौरीशंकर, लक्ष्मीनारायण । धार्मिक, आध्यात्मिक और ईश्वर-प्राप्ति संबंधी कार्यों में नारी का सर्वत्र स्वागत किया गया है और उसे उसकी महानता के अनुकूल प्रतिष्ठा दी गई है। वेदों पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि वेदों के मंत्रद्रष्टा जिस प्रकार अनेक ऋषि हैं, वैसे ही अनेक ऋषिकाएँ भी हैं। ऋषि केवल पुरुष ही नहीं हुए हैं, वरन अनेक नारियाँ भी हुई

हैं। ईश्वर ने नारियों के अंतःकरण में भी उसी प्रकार वेद-ज्ञान प्रकाशित किया जैसे कि पुरुषों के अंतःकरण में, क्योंकि प्रभु के लिए दोनों ही संतान समान हैं। महान दयालु, न्यायकारी और निष्पक्ष प्रभु अपनी ही संतान में नर-नारी का भेदभाव कैसे कर सकते हैं?

जब विद्याध्ययन करने के लिए कन्याओं को पुरुषों की भाँति सुविधा थी, तभी इस देश की नारियाँ गार्गी और मैत्रेयी की तरह विदुषी होती थीं। याज्ञवल्क्य जैसे ऋषि को एक नारी ने शास्त्रार्थ में विचलित कर दिया था। इसी प्रकार शंकराचार्यजी को भारती देवी के साथ शास्त्रार्थ करना पड़ा था। उस भारती देवी नामक महिला ने शंकराचार्य जी से ऐसा अद्भुत शास्त्रार्थ किया था कि बड़े-बड़े विद्वान भी अचंभित रह गए थे। आज जिस प्रकार स्त्रियों के शास्त्राध्ययन पर रोक लगाई जाती है। यदि उस समय ऐसे ही प्रतिबंध रहे होते तो याज्ञवल्क्य और शंकराचार्य से टक्कर लेने वाली स्त्रियाँ किस प्रकार हो सकती थीं? प्राचीनकाल में सभी नर-नारियों को अध्ययन की समान सुविधा थी। स्त्रियों के द्वारा यज्ञ का ब्रह्मा बनने तथा उपाध्याय एवं आचार्य होने के प्रमाण मौजूद हैं।

गायत्री मंत्र का स्त्रियों को अधिकार है या नहीं? यह कोई स्वतंत्र प्रश्न नहीं है। अलग से कहीं ऐसा विधि-निषेध नहीं कि स्त्रियाँ गायत्री जपें या न जपें। यह प्रश्न इसलिए उठता है—यह कहा जाता है कि स्त्रियों को वेद का अधिकार नहीं है। चूँकि गायत्री भी वेद मंत्र है, इसलिए अन्य मंत्रों की भाँति उसके उच्चारण का भी अधिकार नहीं होना चाहिए। स्त्रियों को वेदाधिकार न होने का निषेध वेदों में नहीं है। वेदों में तो ऐसे कितने ही मंत्र हैं, जो स्त्रियों द्वारा उच्चारण होते हैं। स्त्रियों क़े मुख से वेद मंत्रों के उच्चारण के असंख्य प्रमाण भरे पड़े हैं।

"हे स्त्री! तुम कुलवती घृत आदि पौष्टिक पदार्थों का उचित उपयोग करने वाली, तेजस्विनी, बुद्धिमती, सत्कर्म करने वाली

होकर सुखपूर्वक रहो। तुम ऐसी गुणवती और विदुषी बनो कि रुद्र और वसु भी तुम्हारी प्रशंसा करें। सौभाग्य की प्राप्ति के लिए इन वेद मंत्रों के अमृत का बार-बार भली प्रकार पान करो। विद्वान तुम्हें शिक्षा देकर इस प्रकार की उच्च स्थिति पर प्रतिष्ठित कराएँ।"

—यजुर्वेद १४/२

"श्रेष्ठ स्त्रियों को वेद का अध्ययन तथा वैदिक कर्मकांड करने का वैसा ही अधिकार है, जैसा की उर्वशी, यमी, शची आदि ऋषिकाओं को प्राप्त था।" *—व्योम संहिता*

"जिस प्रकार स्त्रियों को वेद के कर्मों में अधिकार है, वैसे ही ब्रह्मविद्या प्राप्त करने का भी अधिकार है।" *—यमस्मृति*

"जैसे कात्यायनी, मैत्रेयी, गार्गी आदि ब्रह्म (वेद और ईश्वर) को जानने वाली थीं, वैसे ही सब स्त्रियों को ब्रह्मज्ञान प्राप्त करना चाहिए।" *—अस्य वामीय भाष्यम्*

"हे समस्त नारियो! तुम्हारे लिए ये मंत्र समान रूप से दिए गए हैं तथा तुम्हारा परस्पर विचार भी समान रूप से हो। तुम्हारी सभाएँ सबके लिए समान रूप से खुली हुई हों, तुम्हारा मन और चित्त समान मिला हुआ हो, मैं तुम्हें समान रूप से मंत्रों का उपदेश करता हूँ और समान रूप से ग्रहण करने योग्य पदार्थ देता हूँ।"

—ऋग्वेद १०/१९१/३

ईश्वर की हम नारी के रूप में, गायत्री के रूप में उपासना करें और फिर नारी जाति को ही घृणित, पतित, अस्पृश्या, अनधिकारिणी ठहराएँ, यह कहाँ तक उचित है, इस पर हमें स्वयं ही विचार करना चाहिए। वेद-ज्ञान सबके लिए है, नर-नारी सभी के लिए है। ईश्वर अपनी संतान को जो संदेश देता है, उसे सुनने पर प्रतिबंध लगाना, ईश्वर के प्रति द्रोह करना है। जैसा वेद भगवान स्वयं उपर्युक्त पंक्तियों में कह रहे हैं। इतने पर भी यदि कोई यह कहे कि स्त्रियों को गायत्री का अधिकार नहीं, तो उसे दुराग्रह या हठधर्मिता ही कहना चाहिए।

महिलाओं के वेद-शास्त्र अपनाने एवं गायत्री-साधना करने के असंख्य प्रमाण धर्म-ग्रंथों में भरे पड़े हैं, उनकी ओर से आँखें बंद करके किन्हीं दो-चार प्रक्षिप्त श्लोकों को लेकर बैठना और उन्हीं के आधार पर स्त्रियों को अनधिकारिणी ठहराना कोई बुद्धिमानी की बात नहीं है। स्त्रियों को पुरुषों की भाँति ही गायत्री का अधिकार है। वे भी पुरुषों की भाँति ही माता की गोदी में चढ़ने की, उसका आँचल पकड़ने की, उसका पय:पान करने की पूर्ण अधिकारिणी हैं। उन्हें सब प्रकार का संकोच छोड़कर प्रसन्नतापूर्वक गायत्री की उपासना करनी चाहिए। इससे उनके भव-बंधन कटेंगे, जन्म-मरण की फाँसी से छूटेंगी, जीव-मुक्ति और स्वर्गीय शांति की अधिकारिणी बनेंगी। साथ ही अपने पुण्य-प्रताप से अपने परिजनों के स्वास्थ्य, सौभाग्य, वैभव एवं सुख-शांति की दिनोदिन वृद्धि करने में महत्त्वपूर्ण सहयोग दे सकेंगी। गायत्री को अपनाने वाली देवियाँ सच्चे अर्थों में देवी बनती हैं, उनमें दिव्य गुणों का प्रकाश होता है, तदनुसार वे सर्वत्र उसी प्रकाश को प्राप्त करती हैं, जो उनका ईश्वर प्रदत्त जन्मजात अधिकार है।

गायत्री-साधना से आत्मिक कायाकल्प

गायत्री मंत्र से आत्मिक कायाकल्प हो जाता है। इस महामंत्र की उपासना आरंभ करते ही साधक को ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे आंतरिक क्षेत्र में एक नई हलचल एवं रद्दोबदल आरंभ हो गई है। संसार का सबसे बड़ा लाभ आत्मबल गायत्री साधक को प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार के सांसारिक लाभ भी प्राप्त होते देखे गए हैं। किसी विशेष आपत्ति का निवारण करने एवं किसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए भी गायत्री-साधना की जाती है। बहुधा इसका परिणाम बड़ा ही आश्चर्यजनक होता है। देखा गया है कि जहाँ चारों ओर निराशा, असफलता, आशंका और भय का अंधकार ही छाया हुआ था, वहाँ वेदमाता की कृपा से एक दैवी प्रकाश उत्पन्न हुआ और निराशा आशा में परिणत हो गई, बड़े

कष्टसाध्य कार्य तिनके की तरह सुगम हो गए। ऐसे अनेकों अवसर अपनी आँखों के सामने देखने के कारण हमारा यह अटूट विश्वास हो गया कि कभी किसी की गायत्री साधना निष्फल नहीं जाती।

गायत्री-साधना आत्मबल बढ़ाने का अचूक आध्यात्मिक व्यायाम है। किसी को कुश्ती में पछाड़ने एवं दंगल में जीतकर इनाम पाने के लिए कितने ही लोग पहलवानी और व्यायाम का अभ्यास करते हैं। यदि कदाचित् कोई अभ्यासी किसी कुश्ती को हार जाए तो भी ऐसा नहीं समझना चाहिए कि उसका प्रयत्न निष्फल गया। इसी बहाने उसका शरीर तो मजबूत हो गया, वह जीवन भर अनेक प्रकार से अनेक अवसरों पर बड़े-बड़े लाभ प्राप्त करता रहेगा। साधना से यदि कोई विशेष प्रयोजन प्रारब्धवश पूरा न भी हो तो भी इतना तो निश्चित है कि किसी न किसी प्रकार साधना की अपेक्षा कई गुना लाभ अवश्य मिलकर रहेगा।

आत्मा स्वयं अनेक ऋद्धि-सिद्धियों का केंद्र है। जो शक्तियाँ परमात्मा में हैं, वे ही उसके अमर-युवराज आत्मा में हैं। समस्त ऋद्धि-सिद्धियों का केन्द्र आत्मा में है, किंतु जिस प्रकार राख से ढका हुआ अंगार मंद हो जाता है, वैसे ही आंतरिक मलिनताओं के कारण आत्मतेज कुंठित हो जाता है। गायत्री-साधना से मलिनता का परदा हटता है और राख हटा देने से जैसे अंगार अपने प्रज्वलित स्वरूप में दिखाई पड़ने लगता है, वैसे ही साधक की आत्मा भी अपने ऋद्धि-सिद्धि समन्वित ब्रह्मतेज के साथ प्रकट होती है। योगियों को जो लाभ दीर्घकाल तक कष्टसाध्य तपस्याएँ करने से प्राप्त होता है, वही लाभ गायत्री साधकों को स्वल्प प्रयास में प्राप्त हो जाता है।

प्राचीनकाल में महर्षियों ने बड़ी-बड़ी तपस्याएँ और योग साधनाएँ करके अणिमा, महिमा आदि ऋद्धि-सिद्धियाँ प्राप्त की थीं। उनकी चमत्कारी शक्तियों के वर्णन से इतिहास-पुराण भरे पड़े हैं। वह तपस्या और योग-साधना गायत्री के आधार पर ही की थी।

सिद्धपुरुषों के अतिरिक्त सूर्यवंशी और चंद्रवंशी सभी चक्रवर्ती राजा गायत्री उपासक रहे हैं। ब्राह्मण लोग गायत्री की ब्रह्मशक्ति के बल पर जगद्गुरु थे। क्षत्रिय गायत्री के भर्गरूपी तेज को धारण करके चक्रवर्ती शासक बने थे। यह सनातन सत्य आज भी वैसा ही है। गायत्री माता का आँचल श्रद्धापूर्वक पकड़ने वाला मनुष्य कभी भी निराश नहीं रहता।

गायत्री की मूर्तिमान प्रतिमा यज्ञोपवीत एवं शिखा

गायत्री के दो पुण्य प्रतीक शिखा व यज्ञोपवीत गायत्री-साधना के साथ अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। इनके साथ गायत्री मंत्रदीक्षा अनिवार्य है। इस विषय में द्विजता अर्थात दूसरे जन्म की महत्त्वपूर्ण अवधारणा जुड़ी हुई है। इन सबके बिना साधना नहीं हो सकती या गायत्री उपासना नहीं की जा सकती हो, ऐसी बात नहीं है। ईश्वर की महाशक्ति गायत्री को अपनाने में कोई प्रतिबंध नहीं हैं, किंतु अपने पुण्य प्रतीकों के साथ विधिवत अपनाई हुई गायत्री उपासना मंजिल को सरल बना देती है। शिखा व यज्ञोपवीत न केवल देव संस्कृति के गौरवमय प्रतीक हैं, वरन ऊँचे उद्देश्यों व आदर्शों के जीवंत प्रतिनिधि भी हैं।

यज्ञोपवीत को ब्रह्मसूत्र भी कहा जा सकता है। ब्रह्मसूत्र में यद्यपि अक्षर नहीं है। तो भी संकेतों से बहुत कुछ बताया गया है। गायत्री को गुरुमंत्र कहा जाता है। यज्ञोपवीत धारण करते समय जो वेदारंभ कराया जाता है, वह गायत्री से कराया जाता है। प्रत्येक द्विज को गायत्री जानना उसी प्रकार अनिवार्य है, जैसे कि यज्ञोपवीत धारण करना। उपवीत सूत्र है, तो गायत्री उसकी व्याख्या है। दोनों की आत्मा एकदूसरे के साथ जुड़ी हुई है। यज्ञोपवीत में तीन तार हैं, गायत्री में तीन चरण हैं। '**तत्सवितुर्वरेण्यं**' प्रथम चरण, '**भर्गोदेवस्य धीमहि**' द्वितीय चरण, '**धियो यो नः प्रचोदयात्**' तृतीय चरण है। तीनों तारों का क्या तात्पर्य है, इसमें क्या संदेश निहित है ? यह बात समझनी हो तो गायत्री के इन तीन चरणों को भली प्रकार जान लेना चाहिए।

उपवीत में तीन प्रकार की ग्रंथियाँ और एक ब्रह्म ग्रंथि होती है। गायत्री में तीन व्याहृतियाँ (भूः भुवः स्वः) और एक प्रणव (ॐ) है। गायत्री के आरंभ में ओंकार और भूः भुर्वः स्वः का जो तात्पर्य है, उसी यज्ञोपवीत की तीन ग्रंथियाँ संकेत करती हैं। उन्हें समझने वाला जान सकता है कि यह चार गाँठें मनुष्य जाति के लिए क्या-क्या संदेश देती हैं? इस महाविज्ञान को सरलतापूर्वक हृदयंगम करने के लिए इसे चार भागों में विभक्त कर सकते हैं—

(१) प्रणव तथा तीनों व्याहृतियाँ अर्थात यज्ञोपवीत की चारों ग्रंथियाँ।

(२) गायत्री का प्रथम चरण अर्थात यज्ञोपवीत की प्रथम लड़,

(३) द्वितीय चरण अर्थात द्वितीय लड़।

(४) तृतीय चरण अर्थात तृतीय लड़।

आइए, अब इन पर विचार करें—

१. **प्रणव** का संदेश है—"परमात्मा सर्वत्र समस्त प्राणियों में समाया हुआ है, इसलिए लोकसेवा के लिए निष्काम भाव से कर्म करना चाहिए और अपने मन को स्थिर तथा शांत रखना चाहिए।"

२. **भूः** का तत्त्वज्ञान है—"शरीर अस्थायी औजार मात्र है इसलिए उस पर अत्यधिक आसक्त न होकर आत्मबल बढ़ाने का, श्रेष्ठ मार्ग का, सत्कर्मों का आश्रय ग्रहण करना चाहिए।"

३. **भुवः** का तात्पर्य है—"पापों के विरुद्ध रहने वाला मनुष्य देवत्व को प्राप्त करता है। जो पवित्र आदर्शों और साधनों को अपनाता है, वही बुद्धिमान है।"

४. **स्वः** की प्रतिध्वनि यह है—"विवेक द्वारा शुद्ध बुद्धि से सत्य जानने, संयम और त्याग की नीति का आचरण करने के लिए अपने को तथा दूसरों को प्रेरणा देनी चाहिए।"

यह चतुर्मुखी नीति यज्ञोपवीतधारी की होती है। इन सबका सारांश यह है कि उचित मार्ग से अपनी शक्तियों को बढ़ाओ और अंतःकरण को उदार रखते हुए अपनी शक्तियों का अधिकांश भाग

जनहित के लिए लगाए रहो। इसी कल्याणकारी नीति पर चलने से मनुष्य, व्यष्टिरूप से तथा समस्त संसार में समष्टिरूप से सुख-शांति प्राप्त कर सकता है। यज्ञोपवीत गायत्री की मूर्तिमान प्रतिमा है, उसका जो संदेश मनुष्य जाति के लिए है, उसके अतिरिक्त और कोई मार्ग ऐसा नहीं, जिसमें वैयक्तिक तथा सामाजिक सुख-शांति स्थिर रह सके।

गायत्री गीता के अनुसार यज्ञोपवीत के नौ तार, जिन नौ गुणों को धारण करने का आदेश करते हैं, वे इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि नौ रत्नों की तुलना में इन गुणों की ही महिमा अधिक है।

(१) जीवन विज्ञान की जानकारी (२) शक्ति संचय की नीति (३) श्रेष्ठता (४) निर्मलता (५) दिव्यदृष्टि (६) सद्गुण (७) विवेक (८) संयम (९) सेवा।

यह नवगुण निस्संदेह नवरत्न हैं। यह नवरत्न मंडित कल्पवृक्ष जिसके पास है, वह विवेकयुक्त यज्ञोपवीतधारी सदा सुरलोक की संपदा भोगता है। उसके लिए यह भू-लोक ही स्वर्ग है, वह कल्पवृक्ष हमें चारों फल देता है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारों संपदाओं से हमें परिपूर्ण कर देता है।

शिखा—इसी तरह देव संस्कृति में, आदर्शों पर चलने के लिए संकल्पित व्यक्तियों का अनिवार्य प्रतीक चिह्न शिखा है। इसकी स्थापना का उद्देश्य यही है कि हर देव संस्कृति के अनुयायी का मस्तिष्क श्रेष्ठ विचारों व उच्च आदर्शों का ही केंद्र रहना चाहिए। जिस मस्तिष्क रूपी दुर्ग पर सद्विचार की धर्म-ध्वजा शिखा के रूप में फहराती है, उसके संरक्षकों का आवश्यक कर्त्तव्य है कि नीच व दुष्ट विचारों को अपने विचार-क्षेत्र में प्रवेश न करने दें और अपने आचरण, स्वभाव व चिंतन को आदर्श के अनुरूप ढालते जाएँ।

मस्तिष्क विद्या के आचार्यों ने शिखा स्थान को मस्तिष्क की नाभि कहा है, दूसरे शब्दों में इसे मस्तिष्क का हृदय भी कह सकते

हैं। योग विज्ञान के अनुसार भी यहाँ सूक्ष्मशक्तियों का केंद्र सहस्त्रार चक्र विद्यमान है। यह केंद्र अदृश्यशक्तियों के साथ व्यक्ति की चेतना को उसी प्रकार जोड़ता है, जैसा फल व डंठल का संबंध रहता है। इस कोमल स्थान को किसी प्रकार की चोट, सरदी, गरमी आदि के कारण हानि न पहुँचे, इसलिए भी शिखा आवश्यक है।

इस तरह जहाँ विचारों को पवित्र रखने की प्रेरणा शिखा में छिपी है। वहीं शरीर व कर्म को पवित्र रखने की दृढ़ता यज्ञोपवीत पैदा करता है। यज्ञोपवीत जहाँ गायत्री की कर्म प्रतिमा है, शिखा गायत्री की ज्ञान प्रतिमा है। कर्म और ज्ञान दोनों के मिलन से ही मनुष्य जीवन को पूर्णता मिलती है। इस तरह यज्ञोपवीत और शिखा की स्थापना प्रत्येक गायत्रीसाधक को आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी बताई गई हैं। इनमें छिपे संदेशों व प्रेरणाओं को धारण करने वाला व्यक्ति पशु से इनसान, इनसान से महान और महान से भगवान बन जाता है।

गायत्री आध्यात्मिक त्रिवेणी है

गायत्री को आध्यात्मिक त्रिवेणी कहा गया है। गंगा, यमुना के मिलने से एक अदृश्य, सूक्ष्म एवं अलौकिक दिव्य सरिता का आविर्भाव होता है, जिसे सरस्वती कहते हैं। गंगा, यमुना और सरस्वती तीनों का सम्मिलन त्रिवेणी कहलाता है। त्रिवेणी होने के कारण ही प्रयाग को तीर्थराज कहा गया है, सब तीर्थों का राजा माना गया है। इसी प्रकार आध्यात्मिक जगत की त्रिवेणी गायत्री है। इसके तीनों अक्षर संकेत रूप से इसी प्रकार के त्रिगुणात्मक सम्मेलन का रहस्योद्घाटन करते हैं। **गा**—पहला अक्षर गंगा बोधक है। **य**—दूसरा अक्षर यमुना का संकेत करता है। **त्री**—तीसरा अक्षर त्रिवेणी का अस्तित्व बताता है। त्रयी शक्ति में कितने ही त्रिक् घुसे हुए हैं—

(१) सत्, चित्, आनंद (२) सत्य, शिव, सुंदर (३) सत्, रज, तम (४) ईश्वर, जीव, प्रकृति (५) ऋक्, यजु, साम

(६) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य (७) गुण, कर्म, स्वभाव (८) शैशव, यौवन, बुढ़ापा (९) ब्रह्मा, विष्णु, महेश (१०) उत्पत्ति, वृद्धि, नाश (११) सरदी, गरमी, वर्षा (१२) धर्म, अर्थ, काम (१३) आकाश, पाताल पृथ्वी (१४) देव, मनुष्य, असुर आदि अगणित त्रिक् गायत्री छंद के गर्भ में संपुटित हैं। जिसमें गहराई तक प्रवेश करके मनन, चिंतन, परिशीलन रूपी स्नान करने से, वैसा ही आध्यात्मिक लाभ प्राप्त होता है जैसा कि भौतिक जगत में त्रिवेणी के स्नान का पुण्य फल माना गया है, क्योंकि उसमें सन्निहित तत्त्वज्ञान अति सरल, सुबोध, सुगम, सीधा और स्थायी सुख-शांति प्रदान करने वाला है।

त्रिविध दुःखों का निवारण

समस्त दुःखों के कारण तीन हैं—(१) अज्ञान (२) अशक्ति (३) अभाव। जो इन तीनों कारणों को जिस सीमा तक अपने से दूर करने में समर्थ होगा, वह उतना ही सुखी बन सकेगा। अज्ञान के कारण मनुष्य का दृष्टिकोण दूषित हो जाता है, वह तत्त्वज्ञान से अपरिचित होने के कारण उल्टा-सीधा सोचता है और उल्टे काम करता है, तदनुरूप उलझनों में अधिक फँसता जाता है और दुखी बनता है। असंभव आशाएँ, तृष्णाएँ, कल्पनाएँ किया करता है। इस उल्टे दृष्टिकोण के कारण साधारण-सी बातें उसे बड़ी दुःखमय दिखाई देती हैं, जिसके कारण वह रोता-चिल्लाता रहता है। अज्ञानी सोचता है कि मैं जो चाहता हूँ, वही सदा होता रहे। प्रतिकूल बात सामने आए ही नहीं। इस असंभव आशा के विपरीत घटनाएँ जब भी घटित होती हैं, तभी वह रोता, चिल्लाता है। अज्ञान के कारण भूलें भी अनेक प्रकार की होती हैं, समीपस्थ सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता है, यह भी दुःख का हेतु है। इस प्रकार अनेक दुःख मनुष्य को अज्ञानता के कारण प्राप्त होते हैं।

अशक्ति का अर्थ है—निर्बलता। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, बौद्धिक, आत्मिक निर्बलता के कारण, मनुष्य अपने स्वाभाविक

जन्मसिद्ध अधिकारों का भार अपने कंधों पर उठाने में समर्थ नहीं होता, फलस्वरूप उसे वंचित रहना पड़ता है। स्वास्थ्य खराब हो, बीमारी ने घेर रखा हो तो स्वादिष्ट भोजन, रूपवती तरुणी, मधुर गीत-वाद्य, सुंदर दृश्य निरर्थक हैं। धन-दौलत का कोई कहने लायक सुख उसे नहीं मिल सकता। बौद्धिक निर्बलता हो तो साहित्य, काव्य, दर्शन, मनन, चिंतन का रस प्राप्त नहीं हो सकता। आत्मिक निर्बलता हो तो सत्संग, प्रेम, भक्ति आदि का आत्मानंद दुर्लभ है। इतना ही नहीं निर्बलों को मिटा डालने के लिए प्रकृति का 'उत्तम की रक्षा' सिद्धांत काम करता है। कमजोर को सताने और मिटाने के लिए अनेकों तथ्य प्रकट हो जाते हैं। सरदी जो बलवानों को बल-वृद्धि प्रदान करती है, वह कमजोरों को निमोनिया, गठिया आदि का कारण बन जाती है। जो तत्त्व निर्बलों के लिए प्राणघातक हैं, वे ही बलवानों को सहायक सिद्ध होते हैं। अशक्त हमेशा दुःख पाते हैं, उनके लिए भले तत्त्व भी आशाप्रद सिद्ध नहीं होते हैं।

अभावजन्य दुःख है—पदार्थों का अभाव। योग्य और समर्थ व्यक्ति भी साधनों के अभाव में अपने को लुंज-पुंज अनुभव करते हैं और दुःख उठाते हैं। गायत्री कामधेनु है। जो उसकी पूजा, उपासना, आराधना और अभिभावना करता है, वह समस्त अज्ञानों, अशक्तियों और अभावों के कारण उत्पन्न होने वाले कष्टों से छुटकारा पाकर मनोवांछित फल प्राप्त करता है।

गायत्रीरूपी कामधेनु की **ह्रीं**—सद्बुद्धि प्रधान, **श्रीं**—समृद्धि प्रधान और **क्लीं**—शक्ति प्रधान, तीन शक्तियाँ अपने साधक के अज्ञान, अशक्ति और अभावजन्य कष्टों का समाधान करती हुई, उसके दुःखों को दूर करती हैं।

ध्यान—गायत्री उपासना में जप के साथ ध्यान अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। जप तो मुख्य रूप से शरीर के अंग-अवयवों द्वारा किया जाता है, किंतु ध्यान में मन को ईश्वर के साथ जोड़ने व एक करने का प्रयास किया जाता है।

ध्यान में हम अपनी रुचि व स्वभाव के अनुरूप साकार या निराकार ध्यान चुनते हैं। मातृरूप में गायत्री महाशक्ति के उपासक प्रात:कालीन स्वर्णिम सूर्य में स्थित हंस पर बैठी गायत्री माता का ध्यान करते हैं। स्वयं को शिशुवत मानकर माँ के आँचल की छाया में बैठने व उनका दुलार भरा प्यार पाने की भावना की जाती है। माँ का पय:पान करते हुए यह अनुभूति करनी चाहिए कि उसके दूध के साथ मुझे सद्‌भाव, ज्ञान व साहस-शक्ति जैसी विभूतियाँ मिल रही हैं और अपना व्यक्तित्व शुद्ध, बुद्ध एवं महान बनता जा रहा है।

स्मरण रहे कि ध्यान-धारणा में कल्पित गायत्री माता एक नारी मात्र नहीं है, वरन समस्त सद्‌गुणों, सद्‌भावनाओं व शक्ति-सामर्थ्य की स्रोत ईश्वरीय शक्ति हैं।

निराकार ध्यान में गायत्री के देवता सविता का ध्यान प्रात: उगते हुए सूर्य के रूप में किया जाता है। भाव किया जाता है कि आदिशक्ति की आभा सूर्य की किरणों के रूप में अपने तक चली आ रही है और हम इसके प्रकाश के घेरे में चारों ओर से घिरे हुए हैं। ये प्रकाश किरणें धीरे-धीरे शरीर के अंग-प्रत्यंगों में प्रवेश कर रही हैं और इन्हें पुष्ट कर रही हैं। जिह्वा, जननेंद्रिय, नेत्र, नाक, कान आदि इंद्रियाँ इस तेजस्वी प्रकाश से पवित्र हो रही हैं और इनकी असंयम वृत्ति जल रही है। शरीर के स्वस्थ, पवित्र और स्फूर्तिवान होने के बाद स्वर्णिम सूर्य किरणों के मन-मस्तिष्क में प्रवेश की भावना की जाती है। इस तेजस्वी प्रकाश के प्रवेश होते ही वहाँ छाए असंयम, स्वार्थ, भय, भ्रम रूपी जंजाल का अज्ञान-अंधकार छँट रहा है और वहाँ संयम, संतुलन व उच्चविचार जैसी विभूतियाँ जगमगा रही हैं। मन और बुद्धि शुद्ध व सजग हो रही हैं, जिनके प्रकाश में जीवनलक्ष्य स्पष्ट हो रहा है।

मन-मस्तिष्क के बाद गायत्रीशक्ति की प्रकाश किरणें भावनाओं के केंद्र हृदयस्थल में प्रवेश कर रही हैं। आदिशक्ति की प्रकाशरूपी

आभा के उतरने के साथ जीवन का अधूरापन समाप्त हो रहा है। उसकी क्षुद्रता, संकीर्णता, तुच्छता को दूर करके वह अपने समान बना रही है। उपासक अपनी लघुता परमात्मा को सौंप रहा है और परमात्मा अपनी महानता जीवात्मा को प्रदान कर रहा है। इस मिलन से हृदय में सद्‌भावनाओं की हिलोरें उठ रही हैं। अनंत प्रकाश के आनंद भरे सागर में स्नान करते हुए आत्मा अपने को धन्य व कृतकृत्य अनुभव कर रही है।

गायत्री का अर्थ चिंतन

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

ॐ—ब्रह्म	भूः—प्राणस्वरूप
भुवः—दुःखनाशक	स्वः—सुख स्वरूप
तत्—उस	सवितुः—तेजस्वी, प्रकाशवान्
वरेण्यं—श्रेष्ठ	भर्गो—पापनाशक
देवस्य—दिव्य को, देने वाले को	धीमहि—धारण करें
धियो—बुद्धि को	यो—जो
नः—हमारी	प्रचोदयात्—प्रेरित करे।

गायत्री-मंत्र के इस अर्थ पर मनन एवं चिंतन करने से अंतःकरण में उन तत्त्वों की वृद्धि होती है, जो मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाते हैं। यह भाव बड़े ही शक्तिदायक, उत्साहदायक, सतोगुणी, उन्नायक एवं आत्मबल बढ़ाने वाले हैं। इन भावों का नित्यप्रति कुछ समय मनन करना चाहिए।

१—"भूः लोक, भुवः लोक, स्वः लोक—इन तीन लोकों में ॐ परमात्मा समाया हुआ है। यह जितना भी विश्व-ब्रह्मांड है, परमात्मा की साकार प्रतिमा है। कण-कण में भगवान समाए हुए हैं। सर्वव्यापक परमात्मा को सर्वत्र देखते हुए, मुझे कुविचारों और कुकर्मों से सदा दूर रहना चाहिए एवं संसार की सुख-शांति तथा शोभा बढ़ाने में सहयोग देकर प्रभु की सच्ची पूजा करनी चाहिए।"

२—"**तत्**—वह परमात्मा, **सवितुः**—तेजस्वी, **वरेण्यं**—श्रेष्ठ, **भर्गो**—पाप रहित और **देवस्य**—दिव्य है, उसको अंतःकरण में धारण करता हूँ। इन गुणों वाले भगवान मेरे अंतःकरण में प्रविष्ट होकर मुझे भी तेजस्वी, श्रेष्ठ, पाप रहित एवं दिव्य बनाते हैं। मैं प्रतिक्षण इन गुणों से युक्त होता जाता हूँ। इन दोनों की मात्रा मेरे मस्तिष्क तथा शरीर के कण-कण में बढ़ती है। इन गुणों से ओत-प्रोत होता जाता हूँ।"

३—"वह परमात्मा, **नः**—हमारी, **धियो**—बुद्धि को, **प्रचोदयात्**—सन्मार्ग में प्रेरित करे। हम सब की, हमारे स्वजन-परिजनों की बुद्धि सन्मार्गगामी हो। संसार की सबसे बड़ी विभूति, सुखों की आदि माता सद्बुद्धि को पाकर हम इस जीवन में ही स्वर्गीय आनंद का उपयोग करें। मानव जन्म को सफल बनाएँ।"

उपर्युक्त तीन चिंतन संकल्प धीरे-धीरे मनन करने चाहिए।

गायत्री एक दैवी विद्या है, जो परमात्मा ने हमारे लिए सुलभ बनाई है। ऋषि-मुनियों ने धर्मशास्त्रों में पग-पग पर हमारे लिए गायत्री-साधना द्वारा लाभान्वित होने का आदेश किया है, इतने पर भी हम इससे लाभ न उठाएँ, साधना न करें लो उसे दुर्भाग्य के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है।

गायत्री गीता

वेदमाता गायत्री का मंत्र छोटा-सा है। उसमें २४ अक्षर हैं, पर इतने थोड़े में ही अनंत ज्ञान का समुद्र भरा पड़ा है। जो ज्ञान गायत्री के गर्भ में है, वह इतना सर्वांगपूर्ण एवं परिमार्जित है कि मनुष्य यदि उसे भली प्रकार समझ ले और अपने जीवन में व्यवहार करे तो उससे लोक-परलोक सब प्रकार से सुख-शांतिमय बन सकते हैं।

आध्यात्मिक और सांसारिक दोनों ही दृष्टिकोण से गायत्री का संदेश बहुत ही अर्थपूर्ण है। उसे गंभीरतापूर्वक समझा और मनन किया जाए, सद्ज्ञान का अविरल स्रोत प्रस्फुटित होता है। गायत्री गीता के १४ मंत्रों का अर्थ इस प्रकार है—

जिसको वेद न्यायकारी, सच्चिदानंद, सर्वेश्वर, समदर्शी नियामक, प्रभु और निराकार कहते हैं, जो विश्व में आत्मा रूप से उस ब्रह्म के समस्त नामों में श्रेष्ठ नाम, पाप-रहित, पवित्र और ध्यान करने योग्य है, वह "ॐ" ही मुख्य नाम माना गया है।

भूः मुनि लोग प्राण को "भूः" कहते हैं। यह प्राण समस्त प्राणियों में सामान्य रूप से फैला हुआ है। इससे सिद्ध होता है कि यहाँ सब समान हैं। अतएव सब मनुष्यों और प्राणियों को अपने समान ही देखना चाहिए।

भुवः संसार में समस्त दुःखों का नाश ही "भुवः" कहलाता है। कर्त्तव्य-भावना से किया गया कार्य ही कर्म कहलाता है। परिणाम में सुख की अभिलाषा को छोड़कर जो कार्य करते हैं, वे मनुष्य सदा प्रसन्न रहते हैं।

स्वः यह शब्द मन की स्थिरता का निर्देश करता है। चंचल मन को सुस्थिर और स्वस्थ रखो, यह उपदेश देता है। सत्य में निमग्न रहो, यह कहता है। इस उपाय से संयमी पुरुष तीनों प्रकार की शांति को प्राप्त करते हैं।

तत् शब्द यह बतलाता है कि इस संसार में वही बुद्धिमान है, जो जीवन और मरण के रहस्य को जानता है। भय और आसक्ति रहित जीता और अपनी गतिविधियों का निर्माण करता है।

सवितुः यह पद बतलाता है कि मनुष्य को सूर्य के समान बलवान होना चाहिए और सभी विषय तथा अनुभूतियाँ अपनी आत्मा से ही संबंधित हैं, ऐसा विचारना चाहिए।

वरेण्यं यह शब्द प्रकट करता है कि प्रत्येक मनुष्य को नित्य श्रेष्ठता की ओर बढ़ना चाहिए। श्रेष्ठ देखना, श्रेष्ठ चिंतन करना, श्रेष्ठ विचारना, श्रेष्ठ कार्य करना इस प्रकार से मनुष्य को श्रेष्ठता प्राप्त होती है।

भर्गो यह पद बताता है कि मनुष्य को निष्पाप बनना चाहिए। पापों से सावधान रहना चाहिए। पापों के दुष्परिणामों को देखकर

उनसे घृणा करे और निरंतर उनको नष्ट करने के लिए संघर्ष करता रहे।

देवस्य यह पद बतलाता है कि मरणधर्मा मनुष्य भी अमरता अर्थात देवत्व को प्राप्त कर सकता है। देवताओं के समान शुद्ध दृष्टि रखने से, प्राणियों की सेवा करने से, परमांर्थ कर्म करने से, निर्बलों की सहायता करने से मनुष्य के भीतर और बाहर देवलोक की सृष्टि होती है।

धीमहि का आशय है कि हम सब लोग हृदय में सब प्रकार की पवित्र शक्तियों को धारण करें। वेद कहते हैं कि इसके बिना मनुष्य सुख-शांति को प्राप्त नहीं होता।

धियो पद बतलाता है कि बुद्धिमान को चाहिए कि वह वेद-शास्त्रों को बुद्धि से मथकर मक्खन के समान उत्कृष्ट तत्त्वों को जाने, क्योंकि शुद्ध बुद्धि से ही सत्य को जाना जाता है।

यो नः पद का तात्पर्य है कि हमारी जो भी शक्तियाँ एवं साधन हैं, चाहे वे न्यून हों अथवा अधिक हों, उनके न्यून से न्यून भाग को ही अपनी आवश्यकता के लिए प्रयोग में लाएँ और शेष को निःस्वार्थ भाव से अशक्त व्यक्तियों को बाँट दें।

प्रचोदयात् पद का अर्थ है कि मनुष्य अपने आपको तथा दूसरों को सत्य मार्ग पर चलने के लिए प्रेरणा दे। इस प्रकार किए हुए सब कामों को विद्वान लोग धर्म कहते हैं।

जो मनुष्य इस गायत्री गीता को भली प्रकार जान लेता है, वह सब प्रकार के दुःखों से छूटकर सदा आनंदमग्न रहता है।

गायत्री गीता के उपर्युक्त १४ श्लोक समस्त वेद शास्त्रों से भरे हुए ज्ञान का निचोड़ हैं। समुद्र-मंथन से १४ रत्न निकले थे। समस्त शास्त्ररूपी समुद्र का मंथन करके निकाले गए यह १४ श्लोकरूपी १४ रत्न हैं। जो व्यक्ति इन्हें भली प्रकार हृदयंगम कर लेता है, वह कभी भी दुखी नहीं रह सकता, उसे सदा आनंद ही आनंद रहेगा। गायत्री महाविद्या की विस्तृत जानकारी के लिए "गायत्री महाविज्ञान" ग्रंथ का स्वाध्याय करें।

अथ गायत्री माहात्म्य

गायत्री की महिमा का वेद, शास्त्र, पुराण सभी वर्णन करते हैं।

"हम साधकों द्वारा स्तुत (पूजित) हुईं, अभीष्ट फल प्रदान करने वाली वेदमाता (गायत्री) द्विजों को पवित्रता और प्रेरणा प्रदान करने वाली हैं। आप हमें दीर्घ जीवन प्राणशक्ति, सुसंतति, श्रेष्ठ पशु (धन), कीर्ति, धन-वैभव और ब्रह्मतेज प्रदान करके ब्रह्मलोक के लिए प्रस्थान करें।" *—अथर्व वेद १९/७१/१*

"जिस प्रकार पुष्पों का सारभूत मधु, दूध का घृत, रसों का सारभूत पथ है, उसी प्रकार गायत्री मंत्र समस्त वेदों का सार है।"

—बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति ४.१६

"गायत्री मंत्र के समान मंत्र चारों वेदों में नहीं है। संपूर्ण वेद, यज्ञ, दान, तप, गायत्री मंत्र की एक कला के समान भी नहीं है, ऐसा मुनि लोग कहते है।" *—विश्वामित्र १५/१*

"गायत्री वेदों की माता अर्थात आदि कारण है। गायत्री वेदों की जननी है। गायत्री पापों को नाश करने वाली है। गायत्री से अन्य कोई पवित्र करने वाला मंत्र स्वर्ग और पृथ्वी पर नहीं है।"

—शंख स्मृति १२/२४

"जिस प्रकार देवताओं में अग्नि, मनुष्यों में ब्राह्मण, ऋतुओं में व्रसंत ऋतु श्रेष्ठ है, उसी प्रकार छंदों में गायत्री श्रेष्ठ है।"

—महानारायणोपनिषद

"गंगाजी के समान कोई तीर्थ नहीं है, केशव से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं है। गायत्री मंत्र के जप से श्रेष्ठ कोई जप न आज तक हुआ है और न होगा।" *—बृहद् यो०याज्ञ०अ०१०,१०-११*

"समस्त जप सूक्तों में, ऋक्-यजु एवं सामवेद में तथा अक्षरादि मंत्रों में गायत्री मंत्र जप परम श्रेष्ठ है।"

—बृहद् पाराशर स्मृति अ० ३/४

"गायत्री का मनन करने से पाप छूटते हैं, स्वर्ग प्राप्त होता है और मुक्ति मिलती है तथा चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) सिद्ध होते हैं।"

—गायत्री तंत्र

"इसी कारण स्नान कर समस्त प्रयत्नों से स्थिर चित्त हो सारे पापों का नाश करने वाली गायत्री का जाप करे।"

—शंख०१२/३०-३१

गायत्री की महिमा अनंत है। वेद-पुराण, शास्त्र, ऋषि-मुनि, गृही-विरागी सभी समान रूप से उनका महत्त्व स्वीकार करते हैं। उसमें हमारे दृष्टिकोण को बदल देने की अद्‌भुत शक्ति है। अपनी उलटी विचारधारा, भ्रांत मनोभूमि यदि सीधी हो जाए, हमारी इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, विचारधारा, भावनाएँ यदि उचित स्थान पर आ जाएँ, तो यह मनुष्य देवयोनि से बढ़कर और यह भूलोक सुरलोक से बढ़कर हर किसी के लिए आनंददायक हो सकता है। हमारी उलटी बुद्धि ही स्वर्ग को नरक बनाए हुए है। इस विषम स्थिति से उबारकर हमारे विचारों को परिवर्तित करने की शक्ति गायत्री में है। जो उस शक्ति का उपयोग करता है, वह विषय विकारों, भ्रांत विचारों और दुर्भावों के भव-बंधन से छूटकर जीवन के सत्य, शिव और सुंदर रूप का दर्शन करता हुआ, परमात्मा को तथा शाश्वत शांति को प्राप्त करता है। इसलिए वेदमाता को महामहिमामयी कहा गया है। उसका माहात्म्य अनंत है।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।

गायत्री महाविद्या घर-घर पहुँचाएँ

गायत्री महामंत्र के अक्षरों में बीज रूप से मानवी संस्कृति एवं आदर्शवादिता के सारे सिद्धांत सन्निहित हैं। इसे विश्व का सबसे छोटा मात्र चौबीस अक्षरों का वह ग्रंथ कह सकते हैं, जिसमें धर्म और अध्यात्म का समूचा तत्वज्ञान सार रूप में समाविष्ट मिल सकता है। इन अक्षरों की व्याख्या में वह सब कुछ है जो मानवी प्रगति एवं सुव्यवस्था के लिए आवश्यक है। यह प्रज्ञा का, विवेकशीलता का मंत्र है। गायत्री महाविद्या का ३१ पुस्तकों का सेट प्रत्येक अक्षर की व्याख्या एवं संदेश हर साधक को नियमित पढ़ना चाहिए।

इन दिनों सारे समाज, सारे वातावरण में अनीति, बेईमानी, चरित्रहीनता, तृष्णा, लिप्सा और क्षुद्र अहंकार का जो विष समा गया है, उसे धोने के लिए यज्ञ और गायत्री के व्यापक विस्तार की क्रांति खड़ी करनी पड़ेगी। इस युग की जाग्रत आत्माओं को अपना कर्त्तव्य समझकर इसे पूरा करना है।

क्या करें ? कैसे करें ? : (१) जाग्रत आत्माएँ न्यूनतम १००-१०० मंत्रलेखन पुस्तकें मँगाकर अपने-अपने समीपवर्ती क्षेत्रों में मंत्रलेखन की प्रेरणा देकर साधक बनाने का प्रयास करें। व्यस्त साधक अपने १० इष्ट-मित्र-सहयोगियों को १०-१० मंत्रलेखन पुस्तकें देकर १०० साधक भी बना सकते हैं।

(२) प्रत्येक गायत्री साधक को अपने घर पर देवस्थापना हेतु पंचदेव का चित्र स्थापित करना चाहिए। इस देव मंदिर के साथ-साथ गायत्री ज्ञान मंदिर स्थापित करने के लिए गायत्री महाविद्या सेट (३१ पुस्तकें ब्रह्मभोज मूल्य ५० रु०) प्रतिदिन एक रुपया अंशदान से एकत्रित राशि से स्थानीय युग साहित्य केंद्र अथवा युग निर्माण योजना, मथुरा से प्राप्त करना चाहिए।

(३) प्राणवान कार्यकर्त्ता स्तर के साधकों को १०० मंत्रलेखन पुस्तिकाओं के १००), न्यूनतम १० गायत्री महाविद्या सेटों के ५०० रु० तथा डाक खरच १६५ रु० कुल ७६५ रु० भेजकर मँगा लेने चाहिए तथा ५०) प्रति सेट गायत्री साधकों के घरों पर ज्ञान मंदिर के रूप में स्थापित कराना चाहिए। डाक खरच कार्यकर्त्ताओं को स्वयं गायत्री विद्या के प्रचार हेतु चलाए जा रहे आंदोलन में लगाना चाहिए।

(४) दानवीर भामाशाहों के सहयोग से गायत्री तपोभूमि से गायत्री महाविद्या के प्रचार हेतु इस आंदोलन में इस साहित्य को आधे मूल्य में उपलब्ध कराया जा रहा है। धनीमानी दानवीरों से अनुरोध है कि इस पुण्य-कार्य में अनुदान भेजकर अपने धन का सदुपयोग करें, पुण्य के भागीदार बनें, माता की कृपा प्राप्त करें।

मिशन की पत्रिकाएँ

(१) अखण्ड ज्योति (मासिक)

(धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का विज्ञान एवं तर्क-तथ्य-प्रमाण की कसौटी पर खरा चिंतन)

वार्षिक शुल्क-96.00, आजीवन शुल्क-1800.00 रुपया।

अखण्ड ज्योति अंग्रेजी (द्वि-मासिक)

वार्षिक शुल्क-60.00 रुपया

पता : अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा-281003

फोन : (0565) 2403940

(२) युग निर्माण योजना (मासिक)

(व्यक्ति, परिवार, समाज निर्माण एवं सात आंदोलनों की मार्गदर्शक पत्रिका)

वार्षिक शुल्क-48.00, आजीवन शुल्क-900.00 रुपया।

युग शक्ति गायत्री (गुजराती मासिक)

(गायत्री महाविज्ञान, धर्म, अध्यात्म एवं युगानुकूल विचार परिवर्तन का मार्गदर्शन)

वार्षिक शुल्क-75.00, आजीवन शुल्क-1500.00 रुपया।

पता : युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281003

फोन : (0565) 2530128, 2530399

फैक्स : (0565) 2530200

(३) प्रज्ञा अभियान (पाक्षिक)

(युग निर्माण मिशन के क्रियाकलापों एवं मार्गदर्शन का समाचार-पत्र)

वार्षिक शुल्क-24.00 रुपया।

पाक्षिक वीडियो पत्रिका : युग प्रवाह

(युग निर्माण मिशन के प्रमुख क्रियाकलापों की दृश्य-श्रव्य जानकारी)

वार्षिक शुल्क-1500.00 रुपया।

पता : शांतिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तराखंड) फोन : 01334-260602

GP 28